RESEARCH PAPER | Journalism | Volume : 3 | Issue : 3 | March 2013 | ISSN - 2249-555X

Hindi Ki Aarthik Patrakarita: Dasha Aur Disha

हिंदी की आर्थिक पत्रकारिता: दशा और दिशा

KEYWORDS

Dr. Rahul Kumar

Ph.D, CMJ University, Shillong

हिंदी पत्रकारिता के पिछले दो दषकों का दौर संक्रमण काल का रहा है। नई आर्थिक नीति लागू होने से पहले ही शेयर बाजार का प्रसार होने लगा। इसके बाद वह बाजार सिर्फ शेयर दलालों और व्यापारियों की सीमा में न रहकर उसे लांघने लगा। यह धीरे-धीरे मध्य वर्ग को अपनी चपेट में लेने लगा। लगभग उन्हीं दिनों राजनीति पर कॉरपोरेट जगत की छाया भी दिखने लगी। राजनीति की दषा और दिषा आर्थिक घटनाओं, गतिविधियों से निर्धारित होने लगी थी। अब समाज के ऊपर बाजार का वर्चस्व स्थापित होने का समय नजदीक आ रहा था। जाहिर है कि पत्रकारिता के लिए भी एक नया दौर शुरू हो रहा था। वह दौर था, आर्थिक पत्रकारिता का। ऐसे में हिंदी पत्रकारिता का दुर्भाग्य था कि उसमें आर्थिक मामलों की समझ रखने वाले पत्रकार षायद ही थे। जब भारत में ८० के दशक के अंतिम सालों में हिंदी पत्रकारिता में आर्थिक पत्रकारिता की चुनौती सामने आई तो हिंदी के पत्रकार लगभग आर्थिक निरक्षरता की समस्या का सामना कर रहे थे। इसमें अंग्रेजी जानने-समझने वाले हिंदी पत्रकारों ने बडी राहत दी।१ ये पत्रकार अनुवाद की आर्थिक पत्रकारिता करने लगे, लेकिन समस्या यह थी कि अनुवादक को भी आर्थिक मामलों की पूरी समझ हो। ऐसा बहुत कम था। साल १९८९ के लो. कसभा चुनाव और कई विधानसभाओं के चुनावों में दिल्ली और अनेक राज्यों में ऐसे अनेक लोग सत्ता में आए, जिन्हें अंग्रेजी नहीं आती थी। उन्होंने हिंदी पर जोर देना शुरू किया।२ गां. वों में फैलते बाजार और राजनीतिक सत्ता के पदों पर आसीन लोगों की अंग्रेजी की कमजोर समझ के कारण लगने लगा कि अब हिंदी पत्रकारिता का स्वर्णिम युग आने वाला है, लेकिन हिंदी पत्रकारिता की अपनी कमजोरियों तथा बाद में घटित कुछ घटनाओं के कारण स्वर्णिम युग की वह उम्मीद छलावा साबित होकर रह गई। बाजार के विस्तार ने आर्थिक पत्रकारिता की जो चुनौतियां पेश की थीं, उनके सामने हिंदी पत्रकारिता टिक नहीं पाई। निष्चित तौर पर इसके लिए हिंदी अखबारों के संपादक जिम्मेदार थे। दरअसल, इन संपादकों ने नई प्रतिभ. ाओं को पत्रकारिता में आने का माहौल तैयार नहीं किया। संपादक अपने को सभी विषयों का विद्वान समझते थे। हालांकि यह विद्धता उनके अंग्रेजी अखबारों के पठन तक सीमित थी। यह बहुत बडी त्रासदी के तौर पर हमारे सामने थी। किसी भी आर्थिक विषय पर अंग्रेजी अखबारों में छपने के बाद ही हिंदी अखबारों के संपादकों की टिप्पणियां छपती थीं। जाहिर है, हिंदी पाठकों को अंग्रेजी अखबारों की बासी खबरों और टिप्पणी दी जाती थी। इस पूरे माहौल को पहली बार नवभारत टाइम्स ने राजेंद्र माथुर की अगुवाई में तोडा।३ पहली बार हिंदी का एक अखबार संपादकीय टिप्पणियों तथा विश्लेषणों में अंग्रेजी अखबारों को पीछे छोडने लगा। उसका प्रभाव हिंदी के दूसरे अखबारों पर धीरे धीरे पडने लगा और हिंदी की आर्थिक पत्रकारिता बासी आर्थिक टिप्पणियों तथा विश्लेषणों के जूठन के दौर से बाहर निकलने लगी। राजेंद्र माथुर हिंदी में आर्थिक अखबार प्रकाशित करना चाहते थे। लेकिन ९ अप्रैल १९९१ में राजेंद्र माथुर के निधन से यह सपना पूरा नहीं हो सका।४ इसके बाद १९९६ में अमर उजाला ने राजेष रपडिया के नेतृत्व में हिंदी आर्थिक अखबार कारोबार षुरू किया, जो कई कारणों से लंबे समय तक नहीं चल सका। राजस्थान में स्थानीय स्तर पर निकालने वाला आर्थिक अखबार नफा-नुकसान पिछले १२-१५ साल से लगातार चल रहा है।

साल १९९१ में ही आर्थिक नीतियों का एक नया दौर शुरू हो गया। यह दौर आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण, खुलेपन तथा भूमंडलीकरण का था। इसके बाद तेजी से बाजार का विस्तार गांवों तक होने लगा। कंपनियों के सामने गांवों में मार्केटिंग की चुनौतियां पैदा हुईं। ग्रामीण भारतीय बाजार की भाषा तो हिंदी हो सकती थी, लेकिन भूमंडलीकरण के बाद भारतीय बाजार की भाषा अंग्रेजी ही होसकती है, इस विचार से प्रभावित भारतीय संभ्रांत वर्ग अंग्रेजी उन्मुख हो गया और हिंदी में आर्थिक पत्रकारिता के विकास की संभावना कमजोर होने लगी। हालांकि, आर्थिक नीतियों में तेजी से हो रहे बदलाव ने आर्थिक पत्रकारिता के अवसरों को कई गुना बढा दिया, लेकिन आर्थिक मामलों की समझ रखने वाले हिंदी पत्रकारों की कमी के कारण हिंदी की आर्थिक पत्रकारिता अंग्रेजी की अनूदित पत्रकारिता के स्तर से ज्यादा नहीं उठ सकी। यह हाल अभी तक बना हुआ है।

आर्थिक पत्रकारिता के पिछले दो दषक काफी मायने रखता हैं। सामान्य अखबारों में न सिर्फ आर्थिक खबरों की रफ्तार बढी है, बल्कि लोग आर्थिक खबरों में रुचि भी लेने लगे हैं। १९९१ में आर्थिक नीतियों के लागू होने से पहले ही नवभारत टाइम्स जैसे अखबारों में आर्थिक मुद्दों पर खबरें और संपादकीय लेख प्रमुखता से प्रकाषित होने लगे थे। सोवियत संघ के पतन की आहट से खबरों का भी स्वरूप बदल रहा था और शीत युद्ध के दौर में उसके साथ खडी भारत जैसी विकासशील अर्थव्यवस्थाओं का नया रुझान भी सामने आ रहा था। इसके उदाहरण स्वरूप 'नवभारत टाइम्स' का एक संपादकीय देखने लायक है-

अलविदा, कार्ल मार्क्स

माओ त्से तुंग को रद्दी की टोकरी में फेंकने के बाद चीन ने कार्ल मार्क्स को भी घूरे पर बैठा दिया है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के मुखपत्र 'दैनिक जनता' ने पहले पृश्ठ पर संपादकीय छापकर ऐलान किया है कि मार्क्स को मरे १०१ साल हो चुके हैं और दुनिया इस दौरान काफी बदल चुकी है। उनकी धारणाएं अपने जमाने में सही थीं, लेकिन आज की सच्चाइयों के साथ जूझने का उन्हें कोई मौका नहीं मिला। इसलिए मार्क्स और लेनिन की किताबों से उद्धरण छांटकर जो व्यक्ति आज की दुनिया की रंगीन विविधता को सीमित करना चाहता है, वह इतिहास की राह में रोडे अटका रहा है। ऐसे रोडेबाजों को 'दैनिक जनता', ने सलाह दी है कि वे चार-पांच साल तक चुप रहें और आज की आर्थिक सच्चाइयों के साथ अपना रिष्ता जोडें। ५

इसी तरह से राजीव गांधी के प्रधानमंत्री बनने के साथ ही कंप्यूटर एवं नई तकनीक के प्रति उनके लगाव ने अर्थव्यवस्था में नए तरह के बदलाव लाने षुरू किए। इस संबंध में 'नवभारत टाइम्स' का एक संपादकीय महत्वपूर्ण है-

आर्थिक नीतियों में व्यापक बदलाव-वासुदेव झा

आर्थिक बदलाव अकेले सन् १९८५ में हुए, उतने पहले षायद ही किसी साल हुए हैं। आजाद 'हिंदुस्तान' के इतिहास में षायद यह पहला साल था जब अर्थव्यवस्था सुधारने के लिए एक साथ इतने उपाय किए गए।

कंपनी कर में एक साथ पांच प्रतिषत की कमी की गई। यह इस उम्मीद में किया गया कि कर कम होने से लोग खुषी-खुषी अपनी आमदनी बताने को प्रेरित होंगे और सरकारी राजस्व में उल्लेखनीय इजाफा होगा। षक नहीं कि ये रियायतें मुख्यत: उच्च और मध्यम वर्ग के पक्ष में जाती हैं। कराधान की सीमांत दर ६२ प्रतिषत से घटकर ५० प्रतिषत पर आ गई है और कर योग्य आय की सीमा बढ जाने से कोई ४० लाख करदाताओं में से १० लाख लोग कर-जाल से बाहर हो गए हैं। ६

राजीव गांधी की आर्थिक नीतियों का असर दिखने लगा था। अर्थव्यवस्था के चरित्र के साथ ही आर्थिक पत्रकारिता भी बदल रही थी। आर्थिक खबरें पहले पृश्ठ पर जगह नहीं पाया करती थीं, पर अब ऐसा नहीं रह गया था। कर अदायगी से जुडी खबर नवभारत टाइम्स के पहले पन्ने पर प्रकाषित हुई थी।

कर-अदायगी सरल बनेगी

नई दिल्ली, १० जनवरी (वार्ता)- वित्त मंत्री विष्वनाथ प्रताप सिंह ने आज रात कहा कि वह प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष कर अदायगी को सरल तथा संतुलित बनाने का प्रयास करेंगे। आकाषवाणी और दूरदर्षन से एक भेंट में श्री सिंह ने कहा कि उनका इरादा करदाताओं को सुविधाएं देने और बेईमान लोगों के खिलाफ कडी व्यवस्था करने का है। उन्होंने कहा कि अनावष्यक और गैर-उत्पादक खर्च हमारा देष बरदाष्त नहीं कर सकता। इसलिए आवष्यक प्रषासनिक सुधार करने होंगे। ७

बहरहाल, तीन राश्ट्रीय आर्थिक अखबार आने के बावजूद हालात बेहतर होते नहीं देख रहे हैं। अनूदित और पाठकों से नहीं जुडने वाले सामग्री के अभाव में तीनों ही हिंदी आर्थिक अखबार पाठकोंको जोडने में सफल नहीं हो रहे हैं। एक और बडी वजह हिंदी के आर्थिक अखबारों की वि. फलता की यह है कि भारत में देसी भाशा के अखबारों और खासतौर पर उत्तर भारत के भारतीय भाशा के अखबारों को अभी भी राजनीतिक आकाओं और नौकरषाहों की नजर में सम्मान प्राप्त नहीं है। नौकरषाही भारतीय भाशा के अखबारों को महत्व नहीं देती। उनके लिए तो बस अंग्रेजी ही सूचना और संचार का बहुत बडा और महत्वपूर्ण स्रोत है। वे अभी भी अंग्रेजों केजमाने की डोर से बंधे हैं और उसकी दुनिया में जीते हैं।८

हालांकि १९९० का दषक आते-आते स्थितियां बदलने लगी थीं। सबसे पहले तोमध्य वर्ग, धनी वर्ग और भारत में विपणन करने वाले लोगों को जैसे ही समझ में आया कि भारतीय भाशाओं के अखबारों के पाठकों की संख्या और प्रभाव बढ रहा है।९ जाहिर है इन स्थितियों का लाभ अखबारी जगत भी उठाना चाहता है और तमाम कॉरपोरेट जगत और विज्ञापन कंपनियों भी उठाना चाहती हैं। इन्हीं सब पहलुओं को ध्यान में रखकर तेजी से तरह तरहके अखबार और पत्रिकाएं लाने की बात होने लगी। संभवत: यही कारण है कि २००८ में षुरूआत में जब षेयर बाजार चरम पर था तब हिंदी में तीन आर्थिक अखबार धडा-धड लॉन्च हो गए। लेकिन दृष्टिहीनता के चलते सारी कवायद आज की तारीख में व्यर्थ साबित हो चुकी है।

आज हिंदी आर्थिक पत्रकारिता में वह हलचल नहीं दिखाई पडती। यह हिंदी में आर्थिक पत्रकारिता की विफलता का जीता-जागता उदाहरण है। अंग्रेजी की पत्रकारिता के सरोकार वे नहीं जो हिंदी पत्रकारिता के सरोकार हैं। आर्थिक पत्रकारिता के मामले में तो यह सौ फीसदी सच है। लेकिन अनूदित पत्रकारिता अपनी मूल भाषा की पत्रकारिता का दामन नहीं छोड सकती। यही हिंदी की आर्थिक पत्रकारिता के साथ हो रहा है। इस पत्रकारिता का पाठकों से ज्यादा सरोकार नहीं रह गया है। हिंदी में आर्थिक पत्रकारिता के उत्थान के लिए जितने अवसर आज मौजूद हैं, उतने पहले कभी नहीं थे, लेकिन उन अवसरों का इस्तेमाल कर अपनी उपयोगिता साबित करने में हिंदी पत्रकारिता पूरी तरह विफल रही है। इसका परिणाम यह निकला है कि आज हिंदी की आर्थिक पत्रकारिता न तो पाठकों से जुड पा रही है और न ही बाजार से ही जुड पा रही है। बहरहाल, मैंने अपने षोध प्रबंध के दौरान कई तरह निश्कर्श निकले, ये भविश्य में हिंदी आर्थिक अखबारों को बेहतर दिषा प्रदान करने में कारगर साबित हो सकते हैं। इस विषय पर कुछ निष्कर्ष बिंदुवार निम्न हैं:

Volume : 3 | Issue : 3 | March 2013 | ISSN - 2249-555X

आजादी के पहले होने वाली आर्थिक पत्रकारिता से लेकर आज तक आर्थिक खबरों के सफर और योगदान के संदर्भ में निष्कर्ष के तौर पर यह बात सामने आई कि पहले की तुलना में हिंदी की पत्रकारिता का पतन हुआ है और आर्थिक पत्रकारिता के लिए भाषा का मानक आज आजादी के साठ साल बाद भी तय नहीं किया जा सका है। बावजूद इसके आज भी आर्थिक पत्रकारिता को हिंदी में कुछ प्रकाशनों ने अपने हितों के कारण ही सही, बचाए रखा है यह अपने आप में सकारात्मक घटना है।

मौजूदा तीनों हिंदी आर्थिक अखबारों इकनॉमिक टाइम्स हिंदी, बिजनेस स्टैंडर्ड हिंदी और बि. जनेस भास्कर तथा उनमें छपने वाली खबरों के आकलन से यह बात सामने आई है कि आर्थिक खबरों के समूचे परिदृश्य पर आज कॉरपोरेट हित हावी हैं, चाहे वह अंग्रेजी हो या हिंदी की खबरें। आम तौर पर खबरों को लिखने का तरीका और उनकी भाषा का व्यापक मेहनतकश आबादी से कोई लेना-देना नहीं होता, न ही अखबारों में बगैर किसी सरकारी योजना के संदर्भ के जनता की आर्थिक समस्याओं का जिक्र ही किया जाता है। अच्छी बात यह है कि अंग्रेजी के अखबारों का अनूदित संस्करण होने के चलते हिंदी के आर्थिक अखबारों में कभी-कभार वे जनपक्षीय खबरें भी जगह पा जाती हैं जो आम तौर पर सामान्य हिंदी दैनिकों में नहीं पाई जातीं। इकनॉमिक टाइम्स हिंदी में स्थानीय खबरों को तवज्जो देने के नाम पर इस अखबार के मूल चरित्र से ही खिलवाड हो रहा है या खबरों के साथ उचित ट्रीटमेंट नहीं कर पा रहा है। यह दिखाता है कि किस तरह प्रकाशनों की दृष्टि अपने मूल उद्देश्य से हट गई है और वे लोकप्रियता तथा उद्देश्य के बीच भ्रम में हैं।

२००८ में आए तीन हिंदी के आर्थिक अखबारों के भविष्य, कंटेंट, भाषा और प्रसार आदि पर कुछ प्रमुख संपादकों के लिए गए साक्षात्कारों में मोटे तौर पर एक उम्मीद दिखती है कि शायद कुछ प्रयोगात्मक तरीकों से पाठकों को हिंदी के आर्थिक अखबारों से जोडा जा सकता है। हालांकि टीके अरुण जैसे पत्रकार यह मानते हैं कि जिस उद्देश्य को लेकर ईटी हिंदी को शुरू किया गया था, वह चूक गया है और इसमें खुद संपादकों की गलती है। हरवीर सिंह और दिलीप मंडल हिंदी के आर्थिक अखबारों की जरूरत पर बल देते हैं, लेकिन इन्हें और पठनीय बनाने की दिशा में फैली निष्क्रियता पर अफसोस जताते हैं।

हिंदी के कुछ ऐसे आर्थिक टिप्पणीकारों के साक्षात्कार हमने लिए जो नियमित तौर पर हिंदी के आर्थिक अखबारों में नौकरी नहीं करते, इसलिए उनके कोई हित इन अखबारों के वाणिज्यिक हितों से नहीं जुडे हैं। यही वजह है कि इन लेखकों ने खुल कर हिंदी के आर्थिक अखबरों की कमियों की ओर ध्यान दिलाया है और मोटे तौर पर एक बात उभर कर सामने आई है कि ये अखबार जनता से जुडे हुए नहीं हैं। इनका काम कॉरपोरेट जगत की सेवा करना है।

भाषा को लेकर हिंदी के आर्थिक अखबारों को आने वाली दिक्कतों को समझने की कोशिश वरिष्ठ पत्रकार अभय दुबे के नजरिये से हमने की है। इनका मानना है कि हिंदी आर्थिक अखबारों को जितना अधिक भाषाई स्तर पर स्वतंत्रता देंगे, इसकी स्वीकार्यता उतनी अधिक बढेगी। इसका दायरा भी बढेगा। अगर कोई हिंदी आर्थिक अखबार फंड के बदले कोश और काउंसिल की जगह परिषद लिखता है, तो यह उचित फैसला नहीं है। इन अखबारों में अंग्रेजी शब्दों का चलन बढने देना चाहिए। ये शब्द चीजों को ज्यादा उचित ढंग से पाठकों तक पहुंचाते हैं।

निष्कर्ष के तौर पर हम पाते हैं कि बिजनेस स्टैंडर्ड हिंदी, बिजनेस भास्कर और इकनॉमिक टाइम्स हिंदी अपने-अपने स्तर पर खबरों के साथ लगातार नए प्रयोग कर रहे हैं। इकनॉमिक टाइम्स एक दिन की बंदी के बाद जब दुबारा २०१२ में लॉन्च हुआ तब यह पूरी तरह से बदले हुए कलेवर के साथ था। इससे साफ है कि हिंदी आर्थिक अखबार नियमित तौर पर अपने कंटेंट के साथ प्रयोग कर रहे हैं। जब से ये तीनों अखबार आए हैं तब से दुनिया आर्थिक संकट के उथल पुथल से जूझ रही है। इसलिए इन अखबारों को एडवरटाइजर और पाठकों के बीच अपने को स्थापित करने में मुष्किल आ रही है। ऐसे में अगर प्रबंधन इन अखबारों को अगले कुछ सालों तक बनाए रखने का फैसला करता है तो इसका फायदा इन अखबारों को जरूर मिलेगा। अमर उजाला का कारोबार जिन दिनों लाया गया था, वह समय अपरिपक्व था। हिंदी पट्टी का मध्य वर्ग अपरिपक्व था। उपभोक्ता वर्ग न सिर्फ षैषव काल में था अपितु परिवर्तन की गति भी धीमी थी। लेकिन अब मेट्रो और टियर टू-टियर थ्री षहरों के मध्य वर्ग की एक बडी आबादी षेयर बाजार, कमोडिटी एक्सचेंज की न्यूनतम चीजों को जान गया है। उसकी दिलचस्पी बिजनेस खबरों में बढी है। भाशा और अनुवाद के स्तर पर तीनों ही आर्थिक अखबारों को बोलचाल की भाशा और षब्दों के इस्तेमाल पर जोर देने की बात सामने आई। कंटेंट के स्तर पर जहां कॉरपोरेट और षेयर मार्केट की खबरों की बहुलता है, तो बडी आबादी और रूरल इकनॉमी को सिरे से दरकिनार कर दिया गया है।

इन सबके बावजूद इन तीनों हिंदी आर्थिक अखबारों का भविश्य उज्ज्वल हो सकता है और यह बाजार और मैक्रोइकनॉमी में सकारात्मक खबरों से ज्यादा उभर कर सामने आ सकता है। इन अखबारों को नए संस्करणों के साथ विस्तार पर जोर देना होगा। इकनॉमिक टाइम्स हिंदी सिर्फ दिल्ली से निकल रहा है। इसे आगे बढने के लिए नए क्षेत्रों में जाना होगा। यह बात भी उभर कर सामने आई कि हिंदी आर्थिक अखबारों की सफलता के लिए कुषल आर्थिक पत्रकारों की जरूरत षिद्दत से महसूस की जा रही है। फिर, हिंदी आर्थिक अखबारों को अपने फोकस्ड पाठक वर्ग की जरूरतों को समझना होगा और उसी के मुताबिक कंटेंट का चयन भी करना होगा। कंटेंट में बहुत ज्यादा उठा-पठक से पाठकवर्ग कंफ्यूज है। हिंदी आर्थिक अखबारों के संपादकों को खबरों के चयन, भाशा, अनुवाद, फाइनेंस-मार्केट-इकनॉमी से जुडे कठिन षब्दों की जगह आसान षब्दों, नए क्षेत्रों में प्रसार आदि पर जोर देना होगा।

भविश्य में इनके बेहतर करने के आधार भी मौजूद हैं। ये ऐसे अखबार हैं जो सीधे मध्य वर्ग के पाठकों तक पहुंच बना रहे हैं या उन तक पहुंचने की कोषिष में हैं। इसका फायदा भी उन्हें मिल सकता है।

REFERENCE १- पेज १५०, आर्थिक पत्रकारिता दषा और दिषा, प्रो मधुसूदन त्रिपाठी, ओमेगा पब्लिकेषन, प्रथम संस्करण २००८ द्य २- पेज १५१, आर्थिक पत्रकारिता दषा और दिषा, प्रो मधुसूदन त्रिपाठी, ओमेगा पब्लिकेषन, प्रथम संस्करण २००८ द्य ३- पेज १५१, आर्थिक पत्रकारिता दषा और दिषा, प्रो मधुसूदन त्रिपाठी, ओमेगा पब्लिकेषन, प्रथम संस्करण २००८ द्य ४- पेज १५१, आर्थिक पत्रकारिता दषा और दिषा, प्रो मधुसूदन त्रिपाठी, ओमेगा पब्लिकेषन, प्रथम संस्करण २००८ द्य ५- पृश्ठ संख्या ४, संपादकीय, 'नवभारत टाइम्स', १२ दिसंबर, १९८४ द्य ६- पृश्ठ संख्या ४, संपादकीय, 'नवभारत टाइम्स', ४ जनवरी, १९८६ द्य ७- पृश्ठ संख्या १, प्रथम पृश्ठ, 'नवभारत टाइम्स', ११ जनवरी, १९८५ द्य ८. भारत की समाचारपत्र क्रांति, रॉबिन जेफ्री (पूंजीवाद, राजनीति और भारतीय द्य भाशाई प्रेस, १९७७-९९, पृश्ठ १४४) द्य ९. भारत की समाचारपत्र क्रांति, रॉबिन जेफ्री (पूंजीवाद, राजनीति और भारतीय द्य भाशाई प्रेस, १९७७-९९, पृश्ठ १४५)